10

आशा आज भी नहीं आई

रुचि वर्मा*

आज हर लड़की पढ़ना चाहती है, पढ़-लिखकर आगे बढ़ना चाहती है। शारीरिक चुनौतियों का सामना करती हुईं कई लड़कियाँ विद्यालय में दाखिला लेती हैं। लेकिन कभी-कभी घर-परिवार से पूरा सहयोग न मिलने पर उनका हौसला दम तोड़ने लगता है। ऐसे में शिक्षक से उन्हें सहयोग मिले तो अपनी पढ़ाई जारी रखने की उनमें फिर से हिम्मत और आत्मविश्वास आ जाता है। ऐसा ही एक अनुभव यहाँ दिया जा रहा है।

'आशा' किसी काल्पनिक कथा की नायिका नहीं है। आशा है, एक राजकीय विद्यालय की कक्षा छठवीं में पढ़ने वाली लड़की। 'आशा' में ऐसा क्या है जो दूसरों में नहीं। आशा पर सबकी नज़र क्यों रहती है? क्या वह बहुत खूबसूरत है? क्या वह बहुत होशियार है? फिर ऐसा क्या है जो मैडम जी हमेशा उसके बारे में पूछती हैं?

आपकी उत्सुकता को और बढ़ाना उचित नहीं। चलिए 'आशा' की कहानी सुनिए मेरी ज़ुबानी।

नवंबर 2012 का महीना चल रहा था। मुझे हरियाणा राज्य के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, सरहौल में एन.सी.ई.आर.टी की ओर से लगातार तीन महीने विद्यालय में कार्य करने का अवसर मिला था। उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों के साथ काम करने का मौका मिल रहा था। कक्षा छठवीं उच्च प्राथमिक स्तर की नींव है। स्वाभाविक था कि मेरी शुरुआत कक्षा छठवीं से ही हो। कक्षा में पहला कदम पड़ते ही बच्चों ने अपनी कुर्सियों से खड़े होकर मेरा स्वागत किया। स्वागत गान यानी कि सुर में 'गुड मॉर्निंग' बोलने का प्रचलन यहाँ नहीं था जैसा कि अकसर विद्यालयों में नज़र आता है। थोड़ा अचंभा हुआ, शायद थोड़ा बुरा भी महसूस हुआ। मन में आया कि अरे! कैसे बच्चे हैं,

* *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* डी.ई.एस.एम., एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली-110016

इन्हें बड़ों को अभिवादन करना भी नहीं आता। अत: मैंने ही उन्हें गुड मॉर्निंग बोला। पलट कर बहुत अच्छा जवाब आया। मन खुश हुआ। उस क्षण यह अहसास हुआ कि मनोवैज्ञानिक स्तर पर प्रत्येक व्यक्ति में सम्मान पाने की लालसा होती है। आपसी पहचान का सिलसिला जारी हुआ। मेरा परिचय जानने के बाद बच्चों के चेहरे के भाव बदलते नज़र आए। कक्षा में नई अध्यापिका के आगमन ने उन्हें रोमांचित किया। अपनी खुशी जाहिर करने के लिए नदीम (उस कक्षा का मॉनिटर) खड़ा होकर बोला – मैडम जी आप हमें क्या पढ़ाएगीं?

मैंने उत्तर दिया, "क्या विज्ञान पढ़ना चाहोगे?"

नदीम बोला, "चलो साथियो, विज्ञान की किताब निकालो।"

मैने बीच में टोकते हुए कहा, "नहीं-नहीं। किताब बस्तों में ही रहने दो। मैं तो आपसे थोड़ी बातचीत करना चाहती हूँ।"

नदीम मुस्कुराते हुए बैठ गया।

अब बारी थी बच्चों के बारे में जानने की। एक-एक करके वे अपना परिचय देते गए। इसी दौरान मेरी नज़र दीवार से चिपक कर बैठी, सहमी हुई सी एक लड़की पर पड़ी। वो मुझे एकटक देख रही थी। मेरे उसकी ओर देखते ही उसने नज़रें झुका लीं। अब उसकी बारी आई अपना परिचय देने की। वो बैठी रही। साथ बैठी लड़की ने उसे कोहनी मारते हुए धीरे से कहा, "उठ जा आशा।" पर उसने नहीं सुना। वह बैठी रही।

मैंने उसका नाम सुन लिया था। मैं बोली, ''क्या हुआ आशा?'' जवाब खामोशी थी। मैं उसकी सीट के पास पहुँची। उसके कंधे पर हाथ रखा और कहा, "आशा क्या किसी से नाराज़ हो?"

उसने उत्तर में गरदन हिलाई नहीं।

आगे मैंने पूछा, "क्या हमसे बात करना नहीं चाहती हो?"

इस बार फिर एक खामोशी थी।

पास बैठी लड़की बोली, "मैडम जी ये ऐसे ही रहती है। यह बहुत कम बोलती है।"

दूसरी लड़की ने बात में बात जोड़ते हुए कहा, "मैडम जी इसको ठीक से बोलना नहीं आता।"

मैंने बात को बीच में रोकते हुए कहा, "अरे नहीं-नहीं। इसे तो सब कुछ आता है। देखना यह अभी अपना नाम बताएगी।'' आशा अभी भी खामोश थी।" उसी मुद्रा में सिर झुकाए मानो किसी अपराधबोध से ग्रस्त हो। मैंने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "अच्छा चलो, आज आशा का बोलने का मन नहीं कर रहा। हम कल आशा के साथ खूब सारी बातें करेंगे।" दूसरे बच्चों से परिचय का सिलसिला जारी रहा। घंटी बजी। मैं सभी बच्चों से विदा ले कक्षा से बाहर आ गई। बच्चों ने चिल्लाकर कहा, "मैडम जी कल भी आइएगा।'' मैं मुस्कुरा दी।"

अगले दिन स्टाफ रूम में बैठी मैं विज्ञान की शिक्षिका से वार्तालाप कर रही थी। अचानक आवाज़ आई, 'गुड मार्निंग मैडम जी।' मैंने मुड़कर देखा। नदीम खड़ा था। वह बोला ''मैडमजी हमारा यह पीरियड (कालांश) खाली

है। आप हमारी कक्षा में आ जाइए।'' मैं विज्ञान की शिक्षिका से विदा ले कक्षा की ओर चल पड़ी। कक्षा में घुसते ही गुडमार्निंग की बारिश हुई। मैं हँस दी। सभी बच्चों को बैठने का इशारा करते हुए मैने कहा, "आशा कैसी हो?"

आशा ने जवाब में गरदन हिला दी।

सभी बच्चे बैठ गए।

मैंने बच्चों से पूछा, "क्या एक पहेली बूझोगे?"

सब चिल्लाए, "हाँ मैडम जी।"

मैने पूछा,

"कक्षा छह में पढ़ती है,
सहमी-सहमी रहती है,
बात नहीं वो करती है,
शायद मुझसे डरती है।
बोलो कौन?"

सब हँसने लगे। एक सुर में बोले, "आशा।"

आशा नीचे मुँह करके मुस्कुरा रही थी।

फिर आगे मैंने कहा, "आशा क्या आज भी कुछ नहीं बोलोगी? अच्छा अपना नाम ही बता दो।" वो धीरे से खड़ी हुई व बोली, "आशा।"

मेरे इशारे पर सभी बच्चों ने ताली बजाई। वो चारों ओर देखने लगी। मैंने कहा-देखा। आशा कितना मीठा बोलती है। वो हँसने लगी। उस दिन कक्षा में हुए क्रियाकलापों को आशा ध्यान से देखती व सुनती रही पर बोली कुछ नहीं।

मैंने अन्य अध्यापिकाओं से आशा के विषय में जानकारी ली। पता चला उसे बोलने में थोड़ी तकलीफ है। वह हमेशा डरी हुई रहती है। उसकी सहेलियों से पूछने पर पता चला कि आशा घर में सबसे छोटी लड़की है। दो बड़ी बहनें व एक भाई और है। घर का बहुत सारा काम आशा करती है। जैसे बरतन माँजना, सफाई करना इत्यादि क्योंकि उसकी मम्मी फैक्ट्री में मजदूर है। लेकिन घर में हमेशा डाँट खाती रहती है। शायद उसे लगता है कि उसे कोई प्यार नहीं करता। इन सब जानकारियों से अंदाज़ा लग गया था कि आशा को थोड़ा समय देने व स्नेह से समझाने की ज़रूरत है। उसका मनोबल उठाने की ज़रूरत है। अगले दिन कक्षा में आशा नहीं दिखाई दी। दूसरे दिन आशा आई। मैं जब भी आशा को देखती उसे अपने पास बुला लेती। उससे हल्की-फुल्की बातचीत करती। उसने थोड़ा-थोड़ा बोलना शुरू कर दिया था। मेरे साथ वह धीरे धीरे खुलने लगी थी। हालाँकि बोलने में उसे तकलीफ होती थी। ज़ुबान साफ नहीं थी। लेकिन वो कोई एक दिन का इलाज तो है नहीं। इसलिए मेरे लिए वो कोई चिंता का विषय भी नहीं था। यह तो सुधर जाएगा। चिंता का कारण कुछ और ही था। वह था आशा की विद्यालय में अनुपस्थिति। वह स्कूल बहुत कम आया करती थी। एक दिन मैंने उसे बुलाकर पूछा, "क्या बात है आशा। तुम रोज़ स्कूल क्यों नहीं आती हो। क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं रहती?"

उसने अटकते हुए कहा, "न....ही मैड...म जी। घर में का.....म होता.....है।"

मैने बात की गहराई को भाँप लिया। मैंने कक्षाध्यापिका से बात कर आशा के माता-पिता को स्कूल बुलवाया। पहले दो-तीन बार में निराशा हाथ लगी। उनके पास स्कूल आने का समय नहीं था क्योंकि उन्हें सुबह-सुबह काम

पर निकलना होता था व देर रात तक घर आते थे।

इस बार तो हद हो गई थी। चार पाँच दिन से आशा स्कूल नहीं आ रही थी। अगले दिन मैंने कक्षा में पूछा, "आशा कहाँ है?"

जवाब मिला, "आशा आज भी नहीं आई।"

उसकी सहेलियों से कारण जानना चाहा। उन्हें भी नहीं पता था कि आशा क्यों नहीं आ रही है।

मन में विचार उठा ऐसी ही पता नहीं कितनी आशा इस देश के हर कोने में मिल जाएगीं। इनके मन की आशा को निराशा में बदलते देर ना लगेगी अगर गंभीरतापूर्वक इस विषय पर कुछ किया ना गया। मैं प्रिंसिपल महोदया के पास गई। कक्षाध्यापिका को भी मैने साथ में ले लिया। आशा के माता-पिता के पास मोबाइल फोन की सुविधा थी। हमने निश्चय किया कि उसके माता-पिता से फोन पर बात की जाए। मैंने उसकी मम्मी से कुछ जानकारी प्राप्त की। उन्हें किसी भी दिन फुर्सत निकाल कर मिलने का आग्रह भी किया। वो मान गई।

आखिर वह दिन आ ही गया जब आशा की मम्मी स्कूल आई। मैने उनसे बात कर उन्हें यह अहसास दिलाने की कोशिश की कि आशा भी अन्य बच्चों की तरह पढ़ाई में अव्वल आ सकती है बशर्ते उस पर आप विश्वास जताएँ। उस पर अपनी अन्य दो बेटियों व बेटों की तरह पूरा ध्यान दें। उसे सिर्फ घर के काम-काजों में लगाए रखने कि बजाय पढ़ने लिखने का प्रोत्साहन दें।

वह बोली, "मैडम जी। ये तो भगवान की करणी है। ये छोरी बोल तो सकती ना पढैगी क्या खाक। घर के काम काज सीखैगी तो दूसरे घर सुख पावैगी। नौकरी तो करण ना लाग रही जो पढ़ावैं। लड़की के इलाज में पैसा भी खर्च करना बेकार है। दूसरे घर जाएगी। लड़का होता, तो इलाज पर रूपया-पैसा खर्चते। पण इब कै फ़ायदा।"

आज भी हमारे समाज में लड़कियों को लेकर पूर्वाग्रह बने हुए हैं। कई घरों में लड़कियाँ उपेक्षित ही रहती हैं। न तो उनकी परवरिश पर अच्छी तरह ध्यान दिया जाता है और न ही उनकी पढ़ाई-लिखाई पर। रूढिवादी मानसिकता से ग्रस्त अभिभावक यही सोचते हैं कि लड़की को शिक्षित करने से क्या फायदा? यहीं पर शिक्षक का दायित्व बढ़ जाता है। ऐसे में शिक्षक का प्यार भरा सहारा लड़की को मिले, तो वह सफलता की ऊँचाइयों को छू सकती है।

मुझे उनकी सोच समझ में आ चुकी थी। भगवान के लेख को मानकर परिस्थिति में सुधार लाने की बजाय उसे स्वीकार लेना ही सर्वाधिक सरल उपाय है। पर मैं भी हार मानने वाली नहीं थी। मैं आशा को हर रोज़ पढ़ाई के महत्त्व को समझाती। अन्य छात्राओं की तरह उसे भी पढ़ने का प्रोत्साहन देती रहती। जितना कुछ उस सीमित समय में मुझसे संभव हुआ मैंने प्रयास किया। थोड़ा बहुत परिवर्तन मैंने महसूस भी किया। आशा कक्षा में हो रही गतिविधियों में भाग लेने लगी थी। स्कूल में उसकी उपस्थिति तो अब भी ज्यों की त्यों थी पर वह जब भी स्कूल आती अपनी अनुपस्थिति

में कराए गए कार्य को पूछने व समझने की कोशिश करती।

आज की कोशिश कल की सफलता होगी इसी उम्मीद के साथ तीन महीने बाद मैंने आशा व अन्य छात्र-छात्राओं से विदा ली। लेकिन मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि हम शिक्षक/शिक्षिका यह ठान लें कि उसे ऐसी प्रत्येक आशा' का भरोसा जीतना है, उसका संबल बनना है तो कोई भी आशा' घर में बैठी रहकर निराशा के सागर में गोते नहीं लगाएगी, बल्कि पढ़-लिखकर बहुत सी अन्य लड़कियों के दिलों में आशा की ज्योति जगाएगी।

❑❑❑